M.A. Semester - I
Philosophy CC - 01
Dr. Ragini Kumari
Associate Prof. & Head
P.G. Centre of Philosophy
Maharaja College, Ara

भारतीय परम्परा में तर्कशास्त्र एवं ज्ञानमीमांसा

भारतवर्ष में आदिकाल से तत्त्वचिंतन की दो प्रकार की पद्धतियाँ विकसित होती चली आयी (i) रहस्यमूलक पद्धति और (ii) तर्कनामूलक पद्धति इनमें तर्कनामूलक पद्धति। से ही साधारणतः ज्ञानमीमांसा और तर्कशास्त्र का सम्बन्ध ज्ञानमीमांसा और तर्कशास्त्र में यह भेद समझा जाता है कि ज्ञानमीमांसा का सम्बन्ध ज्ञान के वस्तुगत पक्ष से है जबकि तर्कशास्त्र का सम्बन्ध ज्ञान के आकारिक पक्ष से है, किन्तु यह एक संकुचित सोच है वस्तुतः तर्कशास्त्र का अपना एक वस्तुगत पक्ष भी है। पाश्चात्य जगत में तो वस्तुगत तर्कशास्त्र भी स्वतन्त्र रूप से विकसित हुआ है इसी भाँति पाश्चात्य आधुनिक तर्कशास्त्र में आकारिक तर्कशास्त्र का भी विकास हुआ है। तर्कशास्त्र में संयुक्त इस आकारिक विशेषण से स्पष्ट है कि तर्कशास्त्र मात्र आकार का विज्ञान नहीं है। तथापि ज्ञानमीमांसा का क्षेत्र तर्कशास्त्र के क्षेत्र से तनिक अधिक विस्तृत है तर्कशास्त्र विचार के नियमों का शास्त्र है जबकि ज्ञानमीमांसा विचार के इन नियमों को आधारभूमि प्रदान करती है। इस अर्थ में ज्ञानमीमांसा विचार के नियमों की आधारभूमि का शास्त्र है। पाश्चात्य जगत में तर्कशास्त्र का ~~क्षेत्र~~ अनुमान तक सीमित है भारतीय परम्परा में पाश्चात्य तर्कशास्त्र जैसा कोई शास्त्र स्वतन्त्र रूप से अब तक विकसित नहीं हो पाया है, वस्तुतः भारतीय परम्परा में प्रमाण रूप में तर्क की प्रतिष्ठा है भी नहीं। यहाँ वाद-न्याय की परम्परा है, इस वाद न्याय की तुलना पाश्चात्य

तर्क से सम्भव तो है किन्तु 'वाद-न्याय तथा तर्क पर्यायवाची नहीं' पाश्चात्य परम्परा में तर्कशास्त्र बहुत सीमा तक अनुमान में केन्द्रित हुआ। किन्तु भारतीय परम्परा में तर्क और अनुमान में भेद है। यहाँ चार्वाक के अतिरिक्त समस्त दार्शनिकमत अनुमान को प्रमाण-रूप स्वीकृत करते हैं। किन्तु तर्क को कहीं भी प्रमाण नहीं कहा गया है। यहाँ तर्क न तो प्रमा है न प्रमाण है और न अनुमान अपितु यह अनुमान का अनुग्राहक है। भारतीय परम्परा के वाद-प्रकरण में अनुमानशास्त्र का विकास तो हुआ है किन्तु यह अनुमानशास्त्र पाश्चात्य तर्कशास्त्र की भाँति आकारिक और वस्तुगत में बँटकर विकसित नहीं हुआ। यहाँ विचार के आकार और वस्तु को अवियोज्य मानते हुए अनुमानशास्त्र का संश्लिष्ट विकास हुआ। यहाँ यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि भारतीय परम्परा में वाद-प्रकरण में अनुमान की जितनी महत्ता बतलायी गयी है उतनी ही महत्ता प्रत्यक्षादि अन्य प्रमाणों की भी है। इस रूप में भारतीय परम्परा में ज्ञानमीमांसा तथा तर्कशास्त्र के बीच विभाजक रेखा खींच पाना उतना आसान नहीं है। अब यह अलग बात है कि वर्तमान समय में पाश्चात्य तर्कशास्त्र की आधारभूमि पर भारतीय तर्कशास्त्र अथवा भारतीय आकारिक तर्कशास्त्र के निर्माण की चेष्टाएँ की जाती हैं। ये चेष्टाएँ महत्त्वपूर्ण भी हैं क्योंकि इन चेष्टाओं के फलस्वरूप पाश्चात्य तर्कशास्त्र जो वर्तमान युग की चिंतन पद्धति का शास्त्र समझा जाता है कि अनेक गुत्थियों के समाधान प्राप्त होते हैं। इस दिशा में बीसवीं शताब्दी में महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं जिनमें रूसी विद्वान शेरबात्स्की, चीनी विद्वान आर० एम० चाई० चौ० भारतीय मूल के श्री जे० एल० शॉ श्री सुरेन्द्र बारलिंगे आदि के प्रयास महत्त्वपूर्ण हैं।

भारतीय ज्ञानमीमांसा का विकास तत्त्वचिंतन की पद्धति के रूप में हुआ है जिसका आधार आस्था है। यहाँ आस्था होने के कारण ही है।

यह उच्छेदवादी भी नहीं है, नहीं कहता है। वह कहता है – कुछ है जो चिरस्थाई नहीं है। वस्तुतः विशुद्ध उच्छेद के आधार ~~है~~ कि पर तो कुछ रचा ही नहीं जा सकता। विशुद्ध उच्छेद सम्भव भी नहीं क्योंकि यदि सबका उच्छेद है तो उच्छेदवाद का भी उच्छेद है। इसलिए "अस्ति तो सहज सिद्ध है। सहजसिद्ध होने के कारण इस अस्ति को तर्कसिद्ध करने की आवश्यकता भी नहीं क्योंकि तर्क के भी आधार होते हैं। यदि यह अस्ति ही नहीं तो तर्क का आधार क्या होगा? वस्तुतः अस्ति को ही स्वयंसिद्ध मानकर युक्लिड्य ज्यामिति की तरह विचार के सारे नियम सारी ज्ञानमीमांसा और यहाँ तक की सारा व्यवहार जगत विकसित और संचालित होता है। यह अस्ति तर्क ना. नहीं आस्था का विषय है, आस्था का स्वरूप ऐसा है कि यह संदेह को अपदस्थ करती है।

ज्ञानमीमांसा के क्षेत्र में ज्ञान की सम्भावना पर सन्देह करके न तो ज्ञानमीमांसा सम्भव है न किसी प्रकार का चिंतन। अतएव ज्ञान की सम्भावना का तो यहाँ प्रश्न ही निरर्थक है, यहाँ प्रश्न ज्ञान की सीमा, ज्ञान के प्रकार ज्ञान की कसौटी ज्ञान की परिभाषा ज्ञान के साधन आदि का है। यहाँ ज्ञान-मात्र ~~(Knowledge~~) संदेह का विषय नहीं यहाँ संदेह और विवेचना का विषय वे साधन हैं जिनसे ज्ञान प्राप्त होता है यहाँ विवेचना का विषय बोध का वह रूप है जो दिग्भ्रमित करता है। इस प्रकार भारतीय परम्परा में बोध जो ज्ञान का पर्यायवाची है, बोध के प्रकार (प्रमा और अप्रमा रूप ज्ञान) ज्ञान की प्रमाणिकता (प्रामाण्यवाद) ज्ञान के साधन (प्रमाण) आदि की विशद विवेचनाएँ हुई है जिन विवेचनाओं का यत्किंचित विवरण प्रस्तुत ग्रन्थ में क्रमानुसार दिया गया है।

भारतीय परम्परा में ज्ञानमीमांसा के उद्भव और विकास का इतिहास भारतीय

दार्शनिक परम्परा के इतिहास जितना ही प्राचीन है। इस भारतीय दार्शनिक परम्परा के इतिहास को श्रमण और ब्राह्मण चिंतन परम्परा में बाँटकर समझा जा सकता है। भारतीय ज्ञानमीमांसा के उद्भव और विकास को दार्शनिक ग्रन्थों की प्रकृति के आधार पर ही रेखांकित किया जा सकता है।

इस दृष्टि से भारतीय ज्ञानमीमांसा के इतिहास को निम्नलिखित पाँच खण्डों में बाँटा जा सकता है –

(i) वैदिक ज्ञानमीमांसा (तत्वमीमांसीय ज्ञानमीमांसा)
(ii) सूत्र ग्रन्थों में उपलब्ध ज्ञानमीमांसा (मनोवैज्ञानिक ज्ञानमीमांसा)
(iii) सम्प्रदाय काल की ज्ञानमीमांसा प्रणालीसिद्ध ज्ञानमीमांसा)
(iv) मध्य विकास काल (तर्कनिष्ठ ज्ञानमीमांसा)
(v) अर्वाचीन काल

(i) वैदिक ज्ञानमीमांसा – भारत में दर्शन की उत्पत्ति वेदों से समझी जाती है। इतिहास वेदों की उत्पत्ति के काल को वैदिक काल का नाम देता है।

(ii) सूत्र ग्रन्थ – उपनिषद काल के अनन्तर सूत्र काल की उद्भावना होती है। यह काल सूत्र ग्रन्थों की रचना का काल है। इसी काल में बौद्ध और जैन मतों का भी उदय हुआ जिन्होंने भारतीय ज्ञानमीमांसा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन किया। उस काल में एक ओर तो ब्राह्मण परम्परा में सांख्य सूत्र, योग सूत्र, वैशेषिक सूत्र, वेदांत सूत्रादि का निर्माण हुआ।

(iii) सम्प्रदाय काल — प्रथम शताब्दी (100 ई०पू०) के अनन्तर का काल भारतीय परम्परा में विविध दार्शनिक सम्प्रदायों के उदय का काल था। उस काल में आचार्यों ने उपलब्ध दार्शनिक सूत्रों पर भाष्य टीका वृत्ति आदि लिखे। फलतः इस काल में सूत्रों की व्यापक अभिव्यक्तियाँ

अपेक्षाकृत सरल रूप में सामने आयी।

(IV) मध्य विकास काल — इस युग को भारतीय परम्परा का आधुनिक युग भी कहा जा सकता है। ऐसा कहने का औचित्य यही है कि इस काल में भारतीय दार्शनिक प्रणाली में तत्वमीमांसा की अपेक्षा ज्ञानमीमांसा प्रमुख होने लगी। इस काल में आस्था का स्थान तर्क ने ले लिया, भारतीय ज्ञानमीमांसा के क्षेत्र में आधुनिक युग की शुरुआत उदयनाचार्य जयन्त भट्ट केशव मिश्र के साथ मानी जा सकती है।

(V) अर्वाचीन काल — कहा जाता है कि वट वृक्ष के नीचे कोई पौधा नहीं पनपता, तत्वचिंतामणि सम्भवतः भारतीय ज्ञानमीमांसा का वट वृक्ष ही सिद्ध हुआ। भले ही उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक से बीसवीं शताब्दी के अवसान तक भारतीय ज्ञानमीमांसा और तर्कशास्त्र के धाराओं की खोज भारतीय और देश-विदेश के विद्वानों ने की, किन्तु इस काल में पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा का जोर और शोर कुछ इतना अधिक रहा कि ये सभी प्रयास ऊँट के मुँह में जीरा ही सिद्ध हुए।